2

सामाजिक अपवर्जन और कार्यप्रणाली विरोधाभास

आर्थिक सुधारों द्वारा सामाजिक और पारंपरिक रूप से अपवर्जित या बहिष्कृत समूहों पर पड़ने वाले प्रभाव का बहुविषयी अध्ययन करने के लिये एक कार्यप्रणाली आधारित ढांचे की आवश्यकता है। अन्यदेशीय नीतियों को अपनाने के कारण उत्पन्न हुए संरचनात्मक रूप से बहिष्कृत सामाजिक समूहों और नये वर्गों की समस्याओं की ओर एक नवीन दृष्टि से देखने की आवश्यकता है। हमने यहाँ एक कार्यप्रणाली और विरोधाभास को रेखांकित किया है जो कि भारत जैसे बहुलतावादी पारंपरिक समाज में सामाजिक अपवर्जन का अध्ययन करने पर स्पष्ट हुई हैं।

आर्थिक सुधार जो वर्ष 1991 में शुरू हुए थे, वे सरकार के बदलने के साथ अभी भी बिना किसी रुकावट के जारी हैं। दसवीं पंचवर्षीय योजना के मध्यावधि मूल्यांकन ने समूहों, क्षेत्रों और विशेष रूप से सामाजिक न्याय और उपेक्षित वर्गों के सशक्तिकरण के क्षेत्र में निराशाजनक कमी की पहचान की है। इसलिए, ग्यारहवीं योजना के लिए योजना आयोग ने सामाजिक रूप से बहिष्कृत समूहों को विकास प्रतिमान का एक हिस्सा बनाने के लिए जानबूझकर समावेशी विकास की रणनीति को चुना। इसलिए, कमजोर वर्गों पर पड़े सुधारों के प्रभाव को लेकर सामाजिक अपवर्जन बहस का एक हिस्सा बन गया है।

सामाजिक अपवर्जन संकल्पना की उत्पत्ति पश्चिम में (लगभग एक सदी पहले) रेने लेनऑर के लेखन में हुई थी। अमर्त्य सेन[1] ने एशियाई विकास बैंक के शोध पत्र में गरीबी और क्षमता के अभाव को लेकर अपने विश्लेषण के माध्यम से संकल्पना के विकास की खोज की। यूके सहित कुछ यूरोपीय सरकारों ने सामाजिक अपवर्जन के मुद्दों से निपटने के लिए अलग मंत्रालयों की स्थापना की है। विश्व बैंक ने विश्व विकास रिपोर्ट (2006) में तथा यूएनडीपी ने अपनी मानव विकास रिपोर्ट (2005) में 'हम और हमारे विकास भागीदारों की विकास की नीतियों को लेकर समझ, डिजाइन और उसे लागू करने के तरीके को मज़बूती से प्रभावित करने के लिए' समावेशन से ही मिलतेजुलते विषय का चयन किया है। इस प्रकार, समावेशन की अवधारणा को इन रिपोर्टों के माध्यम से सार्वजनिक बहस में शामिल किया गया। क्योंकि संकल्पना की प्रकृति बहुआयामी है, अतः विद्वानों ने अपने तय कार्यक्षेत्र की

Copyright © 2017. SAGE Publications India Pvt, Ltd.. All rights reserved.

Chalam, K. S.. Arthik Sudhar Aur Samajik Apvarjan : Bhaarat Mein Upekshit Samuhon Par Udareekaran Ka Prabhav, SAGE Publications India Pvt, Ltd., 2017. ProQuest Ebook Central, http://ebookcentral.proquest.com/lib/inflibnet-ebooks/detail.acti
Created from inflibnet-ebooks on 2022-10-12 18:52:35.

विशेषज्ञता के आधार पर इस पर चिंतन करना शुरू कर दिया। इसने शब्द के अर्थ और उसके कार्यक्षेत्र में कुछ ऐसी अस्पष्टता का सृजन किया, जिसके कारण इसे विस्तार प्रदान करने के लिए सामाजिक वैज्ञानिकों को समाज, अर्थव्यवस्था और विकास की व्यापक रूपरेखा पर इसे अंकित करना पड़ा।

हालांकि भारत में व्याप्त मुद्दों को किसी भी एक विषय की समझ द्वारा व्यक्त किया जाना बहुत मुश्किल है। इसमें एक अंतःविषयक दृष्टिकोण की जरूरत है। दो दृष्टिकोण ऐसे हैं जो कि सभी विषय क्षेत्रों में व्याप्त हैं। एक, आध्यात्मिक या दार्शनिक तर्क, और दूसरा भारतीयों का व्यावहारिक अनुभव है। यदि हम मुद्दे को एक ज्ञानवादी या दार्शनिक समस्या के रूप में देखना चाहते हैं, तो हमारी पृष्ठभूमि सामाजिक विज्ञान के ज्ञान की होनी चाहिए। दुर्भाग्य से, सामाजिक विज्ञान, जिसमें पुराने दौर में सभी सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक मुद्दों को लेकर एक मौलिक एकरूपता का गठन था, आज धीरे-धीरे विघटित हो गया है। प्रत्येक विषय क्षेत्र एक स्वतंत्र विज्ञान के रूप में उभरा है और इसने अध्ययन तथा अनुसंधान के केवल सीमित क्षेत्रों में ही विशेषज्ञता प्राप्त करने के लिए अपने स्वयं के उपकरणों और प्रणालियों को विकसित कर लिया है। यहां तक कि अगर हम इन उपकरणों में से कुछ को काम में भी लेते हैं, तब भी समस्या की एक विस्तृत समझ तक पहुँच पाना मुश्किल है। शायद, यही एक कारण है कि क्यों कई जटिल सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक मुद्दों को आम आदमी तथा प्रभावित नागरिकों को सार्थक ढंग से न तो पढ़ाया गया है और न ही उनकी व्याख्या की गई है। इसीलिए, जॉन रॉल्स, अमर्त्य सेन और दूसरे विद्वानों ने सामाजिक अपवर्जन जैसी समस्याओं को समझने के लिये दार्शनिक दृष्टिकोण का इस्तेमाल किया है। वास्तव में, पुराने दौर के मूल विचारकों एडम स्मिथ से लेकर जे.एस. मिल, जेरेमी बेन्थम और अन्य जिनका समकालीन उदारवादी सिद्धांत वाले विचारकों पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा, दार्शनिक झुकाव वाले थे, जबकि केवल कुछ को छोड़कर अन्य समकालीन नीति निर्माताओं की यह पृष्ठभूमि नहीं है। इसलिए, इस संकल्पना पर विमर्श करने के लिये एक दार्शनिक दृष्टिकोण की आवश्यकता है जो समस्या का मूलतत्व समझने में मदद करती है।

क्या निरीक्षण की भारतीय प्रणालियाँ हैं?

कार्यपद्धति का आधारभूत कार्य तथ्यों को मापने के लिए वैज्ञानिक उपकरण प्रदान करना है। लेकिन, तथ्य की केवल पहचान मात्र होने से यह स्वत: सत्य में परिवर्तित नहीं हो जाता है। इसकी तर्क, तुलना और विवेक के माध्यम से व्याख्या या मूल्यांकन किया जाना चाहिए। यह विशेष रूप से इतिहास और सामाजिक विज्ञान के लेखन के लिए भी सच है। गॉर्डन चाइल्ड के अनुसार 'परीक्षण और त्रुटि (ट्रायल एंड इरर) की एक भौतिक क्रियाविधि

Copyright © 2017. SAGE Publications India Pvt, Ltd.. All rights reserved.

Chalam, K. S.. Arthik Sudhar Aur Samajik Apvarjan : Bhaarat Mein Upekshit Samuhon Par Udareekaran Ka Prabhav, SAGE Publications India Pvt, Ltd., 2017. ProQuest Ebook Central, http://ebookcentral.proquest.com/lib/inflibnet-ebooks/detail.acti
Created from inflibnet-ebooks on 2022-10-12 18:52:35.

से गुजरे बिना ही समस्याओं को हल करने की क्षमता' जैसी तर्क-बुद्धि, मानव समाज में बदलाव लाने तथा वैज्ञानिक तथ्यों को स्थापित करने में भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।[2] लेकिन, पाठक को भी मूल्यांकन करना चाहिए कि कैसे लेखक या रचनाकार तथाकथित सत्य तक पहुँचा है। एक वैज्ञानिक विधि का उपयोग किसी अध्ययन को तभी प्रमाणिक ठहराता है, जब तक कि निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए विश्लेषण के हर स्तर पर किसी विधि का प्रयोग नहीं किया जाता है। ऐसे बहुत से उदाहरण हैं जहाँ विद्वानों ने स्पष्ट रूप से उल्लिखित किया और समझाया है कि वे वैज्ञानिक तरीकों का उपयोग कर रहे हैं, लेकिन निष्कर्ष उहोंने स्वयं के वैचारिक झुकाव के आधार पर निकाला। उदाहरण के लिए, हमारे कुछ बड़े इतिहासकारों, ए.एल. बैशम और नयनजोत लाहिड़ी के द्वारा डी.डी. कोसम्बी के निष्कर्षों पर टिप्पणी को देखना शिक्षाप्रद है। नयनजोत लाहिड़ी ने लेखक के रूप में इतिहासकार, डी.डी. कोसम्बी का मूल्यांकन करने वाले एक नवीन लेख में यह टिप्पणी की है कि 'वे साहित्यिक बातों में डूबे इतिहासकार हैं और जिस तरह उनकी साहित्यिक संवेदनशीलता ने विषयों, संरचना और इतिहास लेखन की विशेषता पर असर डाला' वह उनकी साहित्यिक पृष्ठभूमि से प्रभावित था।[3] जब सामान्यीकरण किया जा रहा हो तब भौगोलिक क्षेत्र के संबंध में सामाजिक विज्ञान की विशिष्टता पर विचार किया जाना चाहिए। विशेष रूप से, सामाजिक इतिहास और परिवर्तन की प्रक्रिया का विश्लेषण करने के लिए इस्तेमाल हुई श्रेणियों को पढ़ते हुए बहुत सावधान रहना चाहिए। भौतिक और प्राकृतिक विज्ञान के विपरीत, सामाजिक विज्ञान की विधियों को समय, भूगोल, जलवायु परिस्थितियों और अन्य बदलते रहने वाले मानकों को ध्यान में रखते हुए प्रयोग करना चाहिए। विज्ञान की एकता में तीन महत्वपूर्ण विवादों को समझने की आवश्यकता है। जे.एस. मिल और कार्ल मार्क्स के समान मार्टिन होलिस ने तीन विवादों की पहचान की है।

> पहला संरचना और क्रिया के संबंध में सात्त्विक है, जिसपर मार्क्स की दलील है कि क्रिया संरचना के द्वारा निर्धारित होती है और मिल जोर देते हैं कि मनुष्य की क्रियाओं और जुनून से ही समाज की सभी घटनाएं उत्पन्न होती हैं। दूसरा कार्यप्रणाली आधारित है, जिसका संबंध अनौपचारिक व्याख्या के विश्लेषण से है। क्या मुख्य विचार आवश्यक है या फिर सामान्य ही है? क्या यह सामान्य से जुड़ा है, जैसे प्रकृति के सामान्य नियम या फिर कुछ विशेष है, जैसे कोई विशिष्ट प्रक्रिया। तीसरा ज्ञानवाद से संबंधित है, जिसके विषय में मिल 'ज्ञान अनुभव से प्राप्त होता है', वाली अनुभववादी सोच का समर्थन करते हैं और मार्क्स ज्ञान को वास्तविकता के आधार पर जांचने के लिए सिद्धांत की मांग करते हैं।[4]

सर्वोपरि, सामाजिक विज्ञान को भौतिक और प्राकृतिक विज्ञान से स्पष्ट रूप से अलग माना जाना चाहिए, जहां श्रेणियों जैसे उद्देश्य, मूल्य, आदर्श आदि की एक भूमिका है। जैसा

Copyright © 2017. SAGE Publications India Pvt, Ltd.. All rights reserved.

Chalam, K. S.. Arthik Sudhar Aur Samajik Apvarjan : Bhaarat Mein Upekshit Samuhon Par Udareekaran Ka
Prabhav, SAGE Publications India Pvt, Ltd., 2017. ProQuest Ebook Central, http://ebookcentral.proquest.com/lib/inflibnet-ebooks/detail.actio
Created from inflibnet-ebooks on 2022-10-12 18:52:35.

कि हम यहां सामाजिक श्रेणियों को लेकर चर्चा कर रहे हैं, उन्हें तथ्यों की पहचान के आधार पर स्थापित करना चाहिए। ऐसे तथ्य जिन्हें न सिर्फ अनुभवजन्य या घटनाप्रधान दुनिया से हासिल किया जाए, बल्कि उन घटनाक्रमों के लिए जिम्मेदार पूरी पृष्ठभूमि का भी ध्यान रखा जाए। एंग्लो-सैक्सन दृष्टिकोण के लिए साक्ष्यों को इकट्ठा कर परिकल्पना की पुष्टि कर इसे साबित किया जाता है। चूंकि सुदूर अतीत और अज्ञात परिस्थितियों में सभी तथ्यों को एक-एक करके सत्यापित करना संभव नहीं है, यह आवश्यक है कि तार्किक संरचना के साथ एक परिकल्पना को विकसित किया जाये, जिससे परीक्षण के द्वारा इसे गलत सिद्ध किया जा सके। लेकिन, कुह्न ने स्पष्ट किया है कि अभी तक इतिहास में कोई परिकल्पना ग़लत साबित नहीं हुई है, सिवाय इसके कि जब इसका प्रवर्तक मर जाता है तो नियम गायब हो जाते हैं और इसके बाद नए सिद्धांत या नियमों का विकास होता है। जब नए नियमों और दर्शन का विकास होता है तब प्रतिमान में स्थानांतरण होता है।[5] भारत में अब सामाजिक अध्ययन के क्षेत्र में प्रतिमान में स्थानांतरण प्रतीत होता है।

सामाजिक अध्ययन, प्रकृति में अंतःविषयक होता जा रहा है, जिसमें न केवल इतिहास, समाजशास्त्र या भाषा विज्ञान से बल्कि अन्य संबंधित अध्ययनों से आदानों की जरूरत है। शोधार्थी किसी के शोध की पुष्टि करने के लिए या किसी की परिकल्पना को मिथ्या सिद्ध करने के लिए संबंधित विषयों के निष्कर्षों के अध्ययन के लिए प्रेरित हुआ है। शोधार्थी से उन क्षेत्रों में निष्कर्ष देने के लिए जहां अनुभववाद का सीमित उपयोग हुआ है, सामाजिक विज्ञान के विश्लेषण के औजारों जैसे पुरातत्व, भाषाशास्त्र, सांख्यिकी आदि के अलावा, तर्क और अन्य अमूर्त उपकरणों या तकनीकों का उपयोग करने की उम्मीद है। इस संदर्भ में महान सांख्य दार्शनिक कपिल द्वारा प्रतिपादित ज्ञान प्राप्ति की भारतीय विधियाँ उपयोगी हैं। कपिल, 18 वीं सदी में देकार्त (अधिकांश सामाजिक विज्ञान के दृष्टिकोण देकार्त से प्रभावित रहे हैं) के समान, अपने पूर्वजों के प्राधिकार को स्वीकार करने से इनकार कर दिया या शब्दम के अधिकार को स्वीकार करने से इनकार कर दिया। कुछ विद्वानों जैसे ए. बी. कीथ ने संकेत दिया है कि सांख्य और बौद्ध धर्म बहुत करीबी सहयोगी हैं। कपिल ने प्रस्तावित किया है कि हमारी इन्द्रियाँ अपनी प्रकृति में सीमित हैं और इसीलिए, हम चेतना के माध्यम से उनसे जो ज्ञान प्राप्त करते हैं वह अपूर्ण है। उन्होंने सभी संभव ज्ञान को तीन साक्ष्य विधियों में सीमित किया है— धारणा, निष्कर्ष और प्रमाणन। उन्होंने परस्पर एक दूसरे से परिणाम निकालकर कारण और प्रभाव की भी व्याख्या की थी।[6]

> कारण का प्रभाव से भी संबंध होना चाहिए। ये एक ही प्रकृति के होने चाहिए। एक योग्य कारण प्रभाव और उपादान कारणत्व के उत्पादन के लिए भी आवश्यक है। उनके कारण और प्रभाव के विचार में, एक पूर्वगामी रूप या तत्व है, जिसका प्रभाव निर्गत है… कपिल के लिए, संपूर्ण औपचारिक जीवन कारण से प्रभाव, प्रभाव से कारण के सिलसिले का परिणाम है।[7]

Copyright © 2017. SAGE Publications India Pvt, Ltd.. All rights reserved.

Chalam, K. S.. Arthik Sudhar Aur Samajik Apvarjan : Bhaarat Mein Upekshit Samuhon Par Udareekaran Ka
Prabhav, SAGE Publications India Pvt, Ltd., 2017. ProQuest Ebook Central, http://ebookcentral.proquest.com/lib/inflibnet-ebooks/detail.actio
Created from inflibnet-ebooks on 2022-10-12 18:52:35.

यह निर्भर समुत्पाद — प्रतीत्यसमुत्पाद (पाली भाषा में पटिच्चसमुप्पाद) जो बुद्ध द्वारा स्वयं आनंद के लिए प्रतिपादित किया गया था, के सिद्धांत के समान है। इसीलिए, भारतीय परंपरा में सत्य पर प्रकाश डालने के लिए अनुसंधान के पर्याप्त तरीके थे जो सामाजिक पड़ताल के लिए भारतीय संदर्भ में इस्तेमाल किये या फिर जोड़े जा सकते थे।

सामाजिक अपवर्जन बनाम अलगाव

जाहिर तौर पर दोहरी प्रकृति वाले सामाजिक अपवर्जन की अवधारणा में समावेशन को हाशिये पर रखा जाता है। इसका अर्थ है कि जब लोगों को समाज का हिस्सा बनने या समावेशी होने का मौका नहीं दिया जाता है, तब अपवर्जन आता है। दूसरे शब्दों में, सामाजिक अपवर्जन को एक प्रक्रिया के संग्रह के रूप में परिभाषित किया गया है, जिसके द्वारा व्यक्तियों, परिवारों, व्यक्तियों के समूहों या समुदाय को समाज के हाशिये पर धकेला या रखा जाता है। इसमें न केवल भौतिक अभाव बल्कि सामाजिक या नागरिक जीवन में भाग लेने के अवसर न देना भी शामिल है। यूरोपीयन समुदाय के अनुभवों के आधार पर, यूरोपीयन संघ (ईयू) ने सामाजिक रूप से उपेक्षित समूहों के रूप में लोगों की 10 श्रेणियों की पहचान की है, जिसमें मानसिक और शारीरिक रूप से विकलांग, असामाजिक लोगों, अपराधियों आदि को सम्मिलित किया गया है। यहाँ मार्क्स की अलगाव की अवधारणा, 'एक स्थिति जिसमें पुरुष स्वयं अपने द्वारा सृजित ताकतों के प्रभुत्व में है', बिल्कुल प्रासंगिक प्रतीत होती है।[8] मार्क्स ने प्रदर्शित किया है कि अलगाव की प्रक्रिया निजी श्रमिकों और वस्तुओं के उत्पादन से उत्पन्न होती है। यह कहा जाता है कि 'वस्तुनिष्ठता अलगाव को व्यवहार में लाना है'। अलगाव की इस प्रक्रिया का कारण प्रकृति पर आदमी के बढ़ते हुए नियंत्रण का इतिहास है। दूसरे शब्दों में, अलगाव ऐतिहासिक दृष्टि से आर्थिक विकास की एक प्रक्रिया से संबंधित है, जिसके सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक निहितार्थ हैं। 10 सामाजिक रूप से बहिष्कृत व्यक्ति या समूह जिनकी पहले चर्चा की गई है, 20वीं सदी में यूरोप में अचानक प्रकट होने वाले स्वायत्त समूह नहीं हैं। वे एक प्रक्रिया के द्वारा निर्मित हुए हैं, जिसे विद्वानों द्वारा समझाया नहीं जा सका है, लेकिन वे (अमर्त्य सेन सहित) उन्हें स्वीकारते हैं। हालांकि सेन ने सक्रिय अपवर्जन, जहां जानबूझकर की गई कार्रवाई शामिल है तथा एक निष्क्रिय समावेशन, जहां एक समूह कुछ नीतियों के कारण असंगत रूप से तथा अनजाने में पीड़ित है, में अंतर के माध्यम से अपवर्जन के रूपों की पहचान करने की कोशिश की है।

सामाजिक अपवर्जन की प्रकृति और जिसके द्वारा लोगों का उपेक्षिकरण हुआ है, उस ऐतिहासिक प्रक्रिया (क्योंकि समाज में व्यक्ति या समूह सामाजिक और ऐतिहासिक रूप से निर्मित हुए हैं) को स्वतंत्र रूप से समझना आवश्यक है। वे किसी समय विशेष पर अनुप्रस्थ

Copyright © 2017. SAGE Publications India Pvt, Ltd.. All rights reserved.

Chalam, K. S.. Arthik Sudhar Aur Samajik Apvarjan : Bhaarat Mein Upekshit Samuhon Par Udareekaran Ka Prabhav, SAGE Publications India Pvt, Ltd., 2017. ProQuest Ebook Central, http://ebookcentral.proquest.com/lib/inflibnet-ebooks/detail.acti
Created from inflibnet-ebooks on 2022-10-12 18:52:35.

इकाइयों के रूप में वर्गीकृत नहीं किये जा सकते हैं। वे एक समयावधि में विकसित होते हैं। इसलिए, अलगाव की संकल्पना दार्शनिक वर्ग के रूप एक सामाजिक घटनाक्रम प्रतीत होती है, जिसे 'सामाजिक अपवर्जन' को समझने के लिए संज्ञान में लेने की जरूरत है। भले ही कोई मार्क्सवादी शब्दावली का प्रयोग करने का इच्छुक नहीं है, लेकिन फिर भी मार्क्सवादियों द्वारा प्रयुक्त विधि और विषयवस्तु भारत जैसे परंपरागत समाजों को समझने के लिए प्रासंगिक प्रतीत होती हैं, जहां सामाजिक अपवर्जन सामाजिक जीवन का एक प्रमुख हिस्सा है।

भारतीय संदर्भ में अपवर्जन

भारत में सामाजिक अपवर्जन एक मूल्य के समान है। यह समय के साथ लोगों के सार्वजनिक और निजी जीवन में पोषित हुआ है। इसके अलावा, भारत में अपवर्जन सामाजिक ही नहीं बल्कि शारीरिक संदर्भों में भी समझा जाता है। तमिलनाडु में अक्टूबर 2010 तक गैर-दलित समुदाय के द्वारा, हिंदुओं और दलित बस्तियों के बीच निर्मित एक दीवार के माध्यम से, दलितों को मुख्यधारा में शारीरिक रूप से प्रवेश करने से रोकते हुए देखा गया है।[9] इसलिए, सामाजिक अपवर्जन जन्म से ही तुच्छ माने जाने वाले लोगों के समूहों के शारीरिक बहिष्कार द्वारा समर्थित है। जाति और सामाजिक बहिष्कार की संस्था, बिना किसी वैचारिक या दार्शनिक समर्थन के बची नहीं रह पाती। शारीरिक बहिष्कार हिंदू दर्शन के कुछ स्कूलों द्वारा अध्यात्मिक रूप से समझाया गया। वास्तव में, ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में 90 वें सूक्त का 13 वाँ छंद भगवान द्वारा सृजन के चार विभागों के विषय में बात करता है। वे अपरिवर्तनीय हैं। गीता सहित बहुत सारे हिन्दू दार्शनिक ग्रंथों में इसे एक *गुण कर्म* विभाजन के रूप में शामिल करके एकदम यही दोहराया गया है।[10] दूसरे शब्दों में, हिंदू समाज के विभाजन के लिए उपेक्षिकरण के मूल्यों के रूप में एक दार्शनिक समर्थन है और जिसकी कभी अवहेलना नहीं की जानी चाहिए, नहीं तो भगवान इस आदेश को पुनः स्थापित करने के लिए अवतार लेंगे। यह आज भी एक प्रभावशाली आदेश की तरह है और लगभग हर भारतीय इसे ऐसे सम्मान देता है जैसे यह अनुष्ठान हो। पंचम क्रम के रूप में पांचवा *वर्ण* अब भी स्थानीय श्रेणी का है। यह मूल भारतीयों और शेष को शामिल करता है।[11] कई दार्शनिक स्कूलों ने उपनिषद की व्याख्याओं से लेकर आज के विडिन्न हिंदू सम्प्रदायों के सिद्धांतों पर आधारित समाज के विभाजन के हिंदू ढांचे के समर्थन में तर्क दिये हैं।

5वीं शताब्दी ईसा पूर्व में सिद्धार्थ या गौतम बुद्ध ने समाज के अनुष्ठान आदेशों से संघर्ष किया था। वर्णधर्म के रूप में समाज का विभाजन वैदिक हिंदू धर्म के दार्शनिक श्रेणियों आत्मा (सोल), कर्म (एक्शन) और पुनर्जन्म (ट्रांसमाइग्रेशन) के द्वारा समर्थित था। बुद्ध ने

Copyright © 2017. SAGE Publications India Pvt, Ltd.. All rights reserved.

Chalam, K. S.. Arthik Sudhar Aur Samajik Apvarjan : Bhaarat Mein Upekshit Samuhon Par Udareekaran Ka Prabhav, SAGE Publications India Pvt, Ltd., 2017. ProQuest Ebook Central, http://ebookcentral.proquest.com/lib/inflibnet-ebooks/detail.actio
Created from inflibnet-ebooks on 2022-10-12 18:52:35.

इन वर्गों से संघर्ष किया और इसके विपक्ष में दलील विकसित करके उपरोक्त सभी श्रेणियों के अस्तित्व को नकार दिया। किसी चरम की ओर झुकाव वाले मोक्ष मार्ग या देह मार्ग के मध्य मार्ग को न चुनकर बुद्ध ने माध्य मार्ग या ज्ञान मार्ग को चुना। बुद्ध का यह ज्ञान मार्ग उनके द्वारा आश्रित उत्पत्ति वाले प्रतीत्यसमुत्पाद के माध्यम से आया था। बुद्ध ने स्वयं ही आनंद को एक सरल सिद्धांत के रूप में, सदैव बदलते मानसिक और शारीरिक घटनाक्रम को समझाया था जिसमें 'आदमी' के रूप में किसी इकाई को नहीं पाया जा सकता है और यह 'आदमी' महज एक नाम है जो किसी भी वास्तविकता से संबंधित नहीं है। इस प्रकार, पिछली क्रियाओं या कर्म के कारण अगले जन्म में उत्कर्ष की खोज में आत्मा के अनन्त स्थानांतरगमन की अभिव्यक्ति के रूप बुद्ध ने एक ही झटके में जाति संरचना या वैदिक हिंदू धर्म के वर्णधर्म को नकार दिया था। बुद्ध ने एक अनात्मावादी के रूप में समुत्पाद के सिद्धांत के माध्यम से कर्म और स्थानांतरगमन दोनों को नकार दिया। दुर्भाग्य से, 6वीं शताब्दी ईसवी में धर्मकीर्ति के बाद आगे यह दार्शनिक विचार विशुद्ध नहीं रह गया। धर्मकीर्ति अंतिम बौद्ध विद्वान प्रतीत होता है जिसने बताया कि पदार्थ और चेतना चित्त के दो रूप हैं और कर्म और पुनर्जन्म के सभी रूपों को नकारने के लिए अनित्य या क्षणिक का अपना सिद्धांत विकसित किया। लेकिन, वैदिक हिंदुत्व के महानतम आदर्शवादी दार्शनिक शंकर की यह महानता थी, जिन्होंने बौद्धों के शून्यवाद या क्षणिकवाद का अनुकरण किया और इसमें बदलाव करते हुए यह घोषित किया कि सब कुछ जो हम भौतिक रूप में देखते हैं, वह 'माया' है। यह दर्शन 'ब्रह्म' के रूप में समाज के मौजूदा विभाजन को उचित सिद्ध करता है क्योंकि स्वयं और 'अहम् ब्रह्मास्मि' (मैं ब्रह्म हूँ) की घोषणा करने वाले ब्रह्म में कोई अंतर नहीं है। इस आध्यात्मिक तर्क ने अधिकांश भारतीयों को इस तर्क के साथ सहज बना दिया कि जाहिर तौर पर समाज में कोई विभाजन नहीं है क्योंकि ईश्वर के सम्मुख सभी बराबर हैं। 20वीं सदी में ईश्वर बाजार बन गया क्योंकि यह सिद्धांत किसी से भी भेदभाव नहीं करता है और यह अंत में समावेशन लाएगा। सभी क्षेत्रों में बाजार का विस्तार (भविष्य के बाजारों सहित) करने कि प्रक्रिया के माध्यम से प्रबंधन गुरु और विशेषज्ञों ने हमें समझाया कि वैश्विक दुनिया में समावेशन संभव है।

द्विभाजन का एक विधि के रूप में किया गया प्रयोग

एक घटना के रूप में सामाजिक बहिष्कार का विश्लेषण ऐसी विधि को अपनाकर जिसके द्वारा संपूर्ण के कुछ हिस्सों को कोई देख सके, किया जा सकता है। द्विभाजन शब्द, एक घटना को दो अलग-अलग बराबर भागों में विभाजित करने के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है। वे

Copyright © 2017. SAGE Publications India Pvt, Ltd.. All rights reserved.

Chalam, K. S.. Arthik Sudhar Aur Samajik Apvarjan : Bhaarat Mein Upekshit Samuhon Par Udareekaran Ka Prabhav, SAGE Publications India Pvt, Ltd., 2017. ProQuest Ebook Central, http://ebookcentral.proquest.com/lib/inflibnet-ebooks/detail.acti
Created from inflibnet-ebooks on 2022-10-12 18:52:35.

प्रायः विषम और विपरीत तत्व के रूप में माने जाते हैं जो परस्पर अखंड हैं। हालांकि कुछ घटनायें प्रकृति में विरोधाभासी हैं, फिर भी हम यहाँ विरोधाभास को आलोचनात्मक रूप में प्रस्तुत नहीं कर रहे हैं। हम यहाँ सिर्फ इस तरह द्विभाजन प्रस्तुत कर रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि एक घटना को दो संस्थाओं में विभाजित करने का तर्क इस प्रकार सुविस्तृत है कि इसने भारतीय समाज को समझने में कुछ मदद की है। शास्त्रीय अर्थशास्त्रियों ने द्विभाजन की विधि का प्रयोग वास्तविक अर्थव्यवस्था को उसके मौद्रिक पक्ष से समझने के लिए किया। जाति एक प्रभावी श्रेणी की सामाजिक घटना है और यह जाति नामक एक सामाजिक वर्ग के हिस्से के रूप में, कुछ विशेष व्यक्तियों को समाहित करने और कुछ समूहों को बहिष्कृत करने के लिए जिम्मेदार है। यूरोपीयन समाज के विपरीत, जहां सामाजिक अपवर्जन एक अस्थायी घटना के रूप में देखा जाता है, भारत में, यह घटना निर्धारित समयावधि के दौरान संरचनात्मक और धार्मिक रूप से निर्मित हुआ। यह आवश्यक है कि समावेशी समाज को समाधान प्रदान करने के लिए इस समस्या को तार्किक दृष्टिकोण से विश्लेषित किया जाये। कई ऐसे द्विभाजन हैं जिनको कोई भारतीय समाज में सोच सकता है। हम सामाजिक अपवर्जन की अवधारणा के संबंध में निम्नलिखित द्विभाजनों को प्रस्तुत कर रहे हैं।

भारत में आध्यात्मिक बनाम अनुभवजन्य वास्तविकतायें

मानव इतिहास में भारतीयों की सबसे बड़ी उपलब्धियों में से एक है अमूर्त सोच के विषय में तर्क व कुतर्क करने की हमारी क्षमता। वास्तव में भारत में बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लोकप्रिय प्रचारकों में से एक ने एक समुदाय विशेष की इस दुर्लभ बुद्धि को भारतीय सॉफ्टवेयर पेशेवरों के उद्भव से जोड़ा है। इसलिए एक सामाजिक बुराई के रूप में सामाजिक अपवर्जन की समस्या, आध्यात्मिक बोध के रूप में हल होती प्रतीत होती है। भारतीय विचारकों, विशेष रूप से वेदान्तियों ने, तीन महावाक्यों को लागू करके जाति विभाजन की समस्या को हल कर दिया है। वे हैं (क) सर्वम् खल्विदम् ब्रह्मम् (यह सच में सब ब्रह्म है), (ख) अहम् ब्रह्मास्मि (आत्मा ब्रह्म के समान ही है), (ग) तत्त्वमसि (तू वही है)। जैसा कि ऊपर इंगित है, पुरुष सूक्त, जहां से वर्णधर्म ने अपनी वैधता को पाया, ने सभी जातियों को एक विराटपुरुष के हिस्से के रूप में माना। इसलिए, विद्वान इन संसाधनों से उद्धरण देकर तर्क करते हैं कि भारत में कोई सामाजिक अपवर्जन नहीं है। लेकिन, हमारे व्यावहारिक अनुभव में द्विभाजन देखा गया है। वही विद्वान जो जाति विभाजन की अदृश्यता को विश्लेषित करता है, दूसरे व्यक्ति से पानी या भोजन स्वीकार नहीं करता है जो जाति के पायदान में सबसे नीचे होता है। हिंदू अद्वैत दर्शन समान श्रेणी में आता है जो कि आदमी और भगवान की अद्वैतता की

Copyright © 2017. SAGE Publications India Pvt, Ltd.. All rights reserved.

Chalam, K. S.. Arthik Sudhar Aur Samajik Apvarjan : Bhaarat Mein Upekshit Samuhon Par Udareekaran Ka Prabhav, SAGE Publications India Pvt, Ltd., 2017. ProQuest Ebook Central, http://ebookcentral.proquest.com/lib/inflibnet-ebooks/detail.actio
Created from inflibnet-ebooks on 2022-10-12 18:52:35.

बात करता है, लेकिन धार्मिक रूप से उनके जन्म के आधार पर समूहों को, उच्च और निम्न श्रेणियों में व्यवस्थित करता है। बहुत से ऐतिहासिक कारणों से जिस प्रकार के दोहरे मापदंड के लिए हमारे देश के महान नेता और संत सार्वजनिक और निजी जीवन में अभ्यस्त होते हैं, ने अनजाने में एक लोकाचार विकसित किया है जो हमारे सामाजिक जीवन में बहुत से द्विभाजनों का नेतृत्व करते हुए अपनी प्रकृति में द्वेषपूर्ण बना हुआ है।

हमारे नेताओं का विभेदन पूर्ण व्यवहार प्रकृति में प्रायः विरोधाभासी है, हमारी नीतियों में प्रदर्शित होता है। ब्रिटिशों के भारतीय एजेंटों ने जजमानी पर आधारित जाति व्यवस्था को खत्म किये बिना ही हमारी भूमि पर पट्टेदारी प्रणाली में स्थायी बंदोबस्त लागू कर दिया। परिणामस्वरूप, भूमि और संपत्ति का असमान वितरण जैसी बुराईयाँ और सामाजिक जीवन में असमानतायें स्थायी संरचनाओं के साथ जारी रहीं। 1951 में योजना आयोग तीन परिकल्पनाओं के प्रदर्शन वाले तीन संस्करणों की पृष्ठभूमि के तहत स्थापित किया गया था। ऐसा लगता है कि सामाजिकतावाद, धर्मनिरपेक्षता और लोकतंत्र के इन संवैधानिक लक्ष्यों को अभी तक हासिल नहीं किया गया है। इसलिए, न्याय की अवधारणा ने, जो कि एक न्यायसंगत समाज में बहुत महत्वपूर्ण है, योजना के दस्तावेजों में अपना स्थान पाया है। लेकिन योजना नीतियों में आध्यात्मिक और अनुभवजन्य तत्वों में द्विभाजन भी एक न्यासंगत भारतीय संभाव्यता के रूप में धारित किया जाता है। यह सूचीबद्ध किया गया है कि प्रत्येक योजना में क्रियान्वित कार्यक्रमों ने एक विशेष समूह को लाभ पहुँचाया है, जबकि दसवीं पंचवर्षीय योजनाओं के पूरा होने के बाद भी सुविधाविहीन समूह सबसे अंत में प्राप्तकर्ता के रूप में बने हुए हैं। योजना निमार्ण में योजना के उद्देश्यों और भौतिक और मानव पूंजी पर दिये गये जोर के संदर्भ में परिणाम के बीच अभी हाल ही में हुए द्विभाजन को इंगित करना प्रासंगिक है। यह एक ज्ञात तथ्य है कि इन दोनों कारकों को भारत में दो प्रमुख समूहों द्वारा आयोजित किया गया और इसलिए ये दोनों समूह अन्य सभी के उपेक्षित होने पर अंतिम लाभकर्ता के रूप में बने हुए हैं। दूसरे शब्दों में, हमारे देश में सामाजिक अपवर्जन योजना प्रक्रिया के भीतर समाहित कर दिया गया है। हमारे कुछ समकालीन विचारक और कार्यकर्ता अब समकालीन आर्थिक नीतियों द्वारा उत्पन्न तनाव सहित अपवर्जन या अलगाव की समस्या को लेकर चिंतित हैं। ग्यारहवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र ने एकाधिक पहचानों के कारण उभरते रूप में इस समस्या को पहचाना। अमर्त्य सेन ने अपनी पुस्तक *पहचान और हिंसा* (2006) में 'विभिन्नता की विविधतायें' को स्पष्ट करने के लिए पहचानों का एक वर्गीकरण प्रस्तुत किया।[12] उन्होंने, हालांकि, संकेत दिया कि 'बजट बाधाएं' की संकल्पना के भीतर राजनीतिक और सामाजिक फैसलों में हमें चयन करना पड़ता है। उन्होंने इंगित किया है कि चयन करने के लिए पहचान को सामाजिक संदर्भ से जोड़ा जाना चाहिए। उन्होंने उदाहरण देकर उसे स्पष्ट किया है कि जब कोई रात के खाने पर

Copyright © 2017. SAGE Publications India Pvt, Ltd.. All rights reserved.

Chalam, K. S.. Arthik Sudhar Aur Samajik Apvarjan : Bhaarat Mein Upekshit Samuhon Par Udareekaran Ka Prabhav, SAGE Publications India Pvt, Ltd., 2017. ProQuest Ebook Central, http://ebookcentral.proquest.com/lib/inflibnet-ebooks/detail.acti
Created from inflibnet-ebooks on 2022-10-12 18:52:35.

जा रहा है, तो एक शाकाहारी के रूप में उसकी पहचान महत्वपूर्ण है न कि उसकी भाषा। लेकिन, भारतीय संदर्भ में यह समस्या जटिल प्रतीत होती है, क्योंकि प्रभावी समूहों द्वारा लोगों पर झूठी पहचान का आरोपण किया जाता है जो उत्पादन के साधनों पर नियंत्रण करते हैं। हालांकि सेन ने ज्ञानवाद के स्तर तक समस्या का समाधान प्रस्तुत किया, किन्तु यह व्यावहारिक स्तर पर मामूली है। रामकृष्ण लालकृष्ण राव ने अपने पत्र में कहा, 'एक हिन्दू, भारतीय होते हुए भी एक हिंदू पहचान होने पर मतभेद का अनुभव नहीं कर सकता है और दूसरा एक व्यक्ति जो एक भारतीय और मुस्लिम है दोनों पहचानों के बीच मतभेद का अनुभव कर सकता है, यदि वह व्यक्ति भारत को एक हिंदूराष्ट्र मानता है।[13] भारत के संदर्भ में यह एक अनुभवजन्य उदाहरण है, जहां सदियों पुराने पूर्वग्रहों के हमारे बचपन के निर्माण में गहराई से जमे होने के कारण व्यक्तिगत स्तर और साथ ही समूह स्तर पर भी मतभेद होता है। ये निर्मित बाल्यावस्थायें हमारी स्कूली शिक्षा प्रणाली में आगे और मजबूत होती हैं, जो भारत के लिए विचित्र है।

पहचान और सामाजिक अपवर्जन की समस्या हमारे समाज के विन्यास में सर्वव्याप्त है। बहुत सी पहचानों के बीच, जिनके बारे में कोई सोच सकता है, यह जाति है जो व्यक्तिगत स्तर पर और एक समूह के रूप में बहुत विचित्र और सर्वव्यापी दोनों है। एक विवेकी मानव वह है जो अपने लिए उस पहचान का चयन करता है जो उसे अधिकतम सामग्री या मौद्रिक लाभ देता है। भारतीय अर्थव्यवस्था में हाल के अनुभव से पता चला है कि कोई व्यक्ति एक जाति विशेष का सदस्य होने के नाते, विशेषतया किसी प्रमुख जाति का होने से अधिकतम सामग्री लाभ को लेकर आश्वासित होता है। यह बहुधा और एक बार फिर से साबित हुआ है कि संकिर्णता से निर्मित व्यापारिक जाति व्यष्टित्व दूसरों को कुछ निश्चित व्यापार तंत्र में प्रवेश की अनुमति नहीं देते हैं। जाति की सामाजिक पूंजी (ये तंत्र) सामाजिक रूप से उपेक्षित बाहरी लोगों के नेटवर्क में प्रवेश करने से मजबूत होता है। बाहरी लोगों के लिए इस तरह की एक मजबूत पहचान के बिना अस्तित्व बनाये रखना बहुत कठिन है। (हमने 'जाति संपत्ति' की अवधारणा का प्रयोग तथाकथित आरक्षण जाति सहित सभी जातियों के संदर्भ में किया है।) आँकड़ों सहित व्यावहारिक साक्ष्य के माध्यम से संपुष्ट किया जा सकता है कि उदारीकरण के बाद की अवधि में एक दशक के भीतर निम्न जातियों के बड़े हिस्से को छोड़कर केवल एक या दो जातियों के बीच, कई अरबपति बनाये गये (अध्याय 4 देखें)। सैद्धांतिक रूप से, कोई भी यह तर्क दे सकता है कि व्यापार के अवसरों को उस हर किसी के लिए, जो सक्षम और प्रतिभाशाली है खोल दिया गया है। लेकिन, रोज के अनुभव के स्तर पर, कोई भी जानता है कि अवसर कैसे पैदा और गृहित हुए हैं। यह बताया गया है कि स्वयं सहायता समूहों के गठन में भी, महिलाओं तक में सामाजिक अपवर्जन ने जगह बना ली है। इस तर्क की पुष्टि के लिए कोई भी, निजी क्षेत्र की विविधता की नीति

Copyright © 2017. SAGE Publications India Pvt, Ltd.. All rights reserved.

Chalam, K. S.. Arthik Sudhar Aur Samajik Apvarjan : Bhaarat Mein Upekshit Samuhon Par Udareekaran Ka
Prabhav, SAGE Publications India Pvt, Ltd., 2017. ProQuest Ebook Central, http://ebookcentral.proquest.com/lib/inflibnet-ebooks/detail.actio
Created from inflibnet-ebooks on 2022-10-12 18:52:35.

पर समकालीन बहस का उद्धरण दे सकता है जिसे भारतीय उद्योग परिसंघ (सीआईआई) और अन्य संस्थाओं की ओर से शुरू किया गया है। इसलिए, भारतीय संदर्भ में सामाजिक अपवर्जन को प्रणाली के भीतर ही बनाया गया है और यह आगे बढ़ा है, जब नए विचार/संस्थायें जैसे वैश्वीकरण उत्पन्न हुआ। हाल ही के घोटालों में जिनमें अनुसूचित जाति/जनजाति के पहली पीढ़ी के राजनेता शामिल हैं को अत्यधिक बढ़ा-चढ़ा पेश किया गया है। राव ने भारतीय दार्शनिक अनुसंधान परिषद (आईसीपीआर) के लिए अपने शोधपत्र में बताया कि मौजूदा आध्यात्मिक परिकल्पनायें भारतीय संदर्भ में इस तरह की समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करने के लिए अपर्याप्त हैं।

क्या बाजार समावेशन के एक साधन के रूप में सेवा कर सकता है?

सामाजिक अपवर्जन की अवधारणा के साथ कार्यवाही करने में जहाँ तक वैश्वीकरण का संबंध है, सैद्धांतिक आधारों और व्यावहारिक अनुभव में विरोधाभास है। यह तर्क दिया गया कि बाजार हमारी बहुत सी समस्याओं के हल के रूप में एक महत्वपूर्ण समाधान के रूप में उभरा है। नीति निर्माताओं ने इसको समावेशन लाने वाले एक उपकरण के रूप में अपनाया है। भारतीय संदर्भ में बाजार अपने विस्तार और सामग्री में समावेशी प्रतीत होता है। बाजार जीवन के सभी क्षेत्रों, ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में प्रवेश कर रहा है और पारंपरिक और आधुनिक संस्थानों पर कब्जा कर रहा है। अमुद्रीकृत बाजार ने अपने पूरे सामर्थ्य से वायदा बाजार के माध्यम से कृषि क्षेत्र के तथाकथित अमुद्रीकृत भाग को समाविष्ट कर लिया है। यह एक सर्वशक्तिमान संस्था के रूप में उभरा है जिसके अंतर्गत सब कुछ संभव है। तो फिर समस्या क्या है? ज्ञानवाद के दृष्टिकोण से देखा जाये तो, बाजार नामक संस्था की रचना कर और उसे विस्तार देकर पूरी तरह समावेशी बनाकर हमने समस्या का समाधान कर लिया है। सेन ने भी अपनी नवीनतम पुस्तक में संकेत दिया है कि, 'आगे बढ़ने के लिए न्याय की सीमायें' का अनुभव करने के लिए, बाजार ने वैश्विक स्तर पर संपत्ति हासिल करने में मदद की है (ह्यूम)। लेकिन, यही संस्था असमानताओं का निर्माण करने के लिए जिम्मेदार है, जिसने कमजोरों और उपेक्षितों के सामाजिक अपवर्जन को मजबूत किया है। इसलिए सेन ने खुद भी बाजारों के हमले से कमजोर को बचाने के लिए नई सामाजिक और राजनीतिक संस्थाओं की स्थापना की वकालत की है। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के दस्तावेज से पता चलता है कि इसके समावेशी विकास की रणनीतिक पहल में कि कुछ नीति सुझावों को शामिल किया गया है (अध्याय 4)।[14] अभी यह देखना बचा है कि किस सीमा तक समावेशन की नीति को अपनाया गया है?

Copyright © 2017. SAGE Publications India Pvt, Ltd.. All rights reserved.

Chalam, K. S.. Arthik Sudhar Aur Samajik Apvarjan : Bhaarat Mein Upekshit Samuhon Par Udareekaran Ka Prabhav, SAGE Publications India Pvt, Ltd., 2017. ProQuest Ebook Central, http://ebookcentral.proquest.com/lib/inflibnet-ebooks/detail.acti
Created from inflibnet-ebooks on 2022-10-12 18:52:35.

द्विभाजन समाप्त करने में संस्थागत पहचान

धन का सृजन और असमानताओं का विस्तार, इनके बीच का विरोधाभास बाजार द्वारा हल नहीं किया जा सका है। वास्तव में, एडम स्मिथ, राजनीतिक अर्थव्यवस्था के पिता जिन्होंने वेल्थ ऑफ़ नेशन आलेख प्रस्तुत किया, को बाजार की सीमाओं का एहसास हुआ। उन्होंने कहा है कि राज्य के 'महान महत्व के तीन कर्तव्य' हैं (विश्व बैंक ने 1997 की एक रिपोर्ट में राज्य के महत्व को दोहराया)। वे न्याय, रक्षा और सार्वजनिक कार्य और शिक्षा जैसे कुछ निश्चित संस्थानों के प्रबंधक हैं। ये संस्थान निश्चित रूप से सामाजिक हितों के साथ निजी हितों में सुसंगतता लायेंगे। स्मिथ ने केवल सामान्य कल्याण की स्थिति में निर्दिष्ट संस्थागत व्यवस्था के अंतर्गत आत्म हित की बात की। भारतीय संदर्भ में, ऐसे संस्थानों कि शिनाख्त आवश्यक है जो एक पहचान को बढ़ाव दें जो अन्य पहचानों को बढ़ावा देंगी। भारत ने समानता, न्याय और स्वतंत्रता के महान आदर्शों के साथ, एक धर्मनिरपेक्ष ढांचे के तहत है संविधान लिखा। यह हमारे संवैधानिक पहचान के रूप में माना जा सकता है। देश में इस संवैधानिक पहचान को विकसित करने के लिए हम संस्थागत पुनर्गठन के क्षेत्र में दो महत्वपूर्ण नीतिगत फैसलों पर विचार कर सकते हैं, जो समावेशन को बढ़ावा दे सकते हैं। एक, जैसा कि हम सभी भारतीय जानते हैं कि हमारी कोई व्यक्तिगत पहचान नहीं होती है बल्कि समूह के रूप में पहचान, एक जाति या समुदाय के सदस्यों के रूप में होती है। इस स्तर पर कट्टरपंथी सुधारों को प्रस्तुत करना आवश्यक है। भारत में सगोत्र विवाहों की संस्था के माध्यम से, जाति के संदर्भ में समूह की पहचान को पुन:निर्मित किया गया है। इसलिए, हम एक विधेयक के माध्यम से सगोत्र विवाह को हतोत्साहित करने के विषय में सोच सकते हैं, जिससे लोग अंतर्विवाह कर सकते हैं और एक समय के बाद अपनी जाति की पहचान को दफना सकते हैं। दो, 'पब्लिक स्कूल' नामक संस्थान भारत के लिए बहुत खास हैं। इसने समाज के स्थायी सरंचना के रूप में, अपने तीन प्रकार के स्कूलों के माध्यम से लोगों के तीन वर्गों का निर्माण किया है।[15] भारत में छोड़कर, दुनिया भर में राज्य के द्वारा स्कूली शिक्षा प्रदान की जाती है और उसकी गारंटी दी जाती है। यह आरोप लगाया गया है कि निजी स्कूल विभिन्न संप्रदायों द्वारा चलाये जाते हैं, जो विविध पहचानों को बढ़ावा दे रहे हैं। इसलिए, संवैधानिक मूल्यों के विकास के लिए शुरूआती स्तर पर सभी प्रकार के निजी स्कूलों के खत्म करने और समावेशिता के मूल्यों को उत्पन्न करने के लिए एक पहचान को बढ़ावा देने के लिए, सभी के लिए समान स्कूलों को बढ़ावा देने की जरूरत है। आरटीई अधिनियम के नियम निजी स्कूलों की निरंतरता प्रदान करते हैं। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना ने जोर दिया कि यह तीव्रता पर आधारित नई दृष्टि प्राप्त करने के लिए, नीतियों को पुनर्गठित करने का अवसर उत्पन्न करती है, विभाजन में सेतु-बंधन के द्वारा अधिक वैविध्यपूर्ण और

Copyright © 2017. SAGE Publications India Pvt, Ltd.. All rights reserved.

Chalam, K. S.. Arthik Sudhar Aur Samajik Apvarjan : Bhaarat Mein Upekshit Samuhon Par Udareekaran Ka Prabhav, SAGE Publications India Pvt, Ltd., 2017. ProQuest Ebook Central, http://ebookcentral.proquest.com/lib/inflibnet-ebooks/detail.actio
Created from inflibnet-ebooks on 2022-10-12 18:52:35.

समावेशी विकास केवल तभी वास्तविकता में होगा जब ऊपर सूचीबद्ध द्विभाजनों में से कुछ संबोधित किये जायेंगे। यहाँ बहिष्कृत समूहों से बातचीत करने के लिए कार्यप्रणाली मापदंडों पर आधारित उपरोक्त चर्चा अत्यधिक महत्व की है। ये भारत में सामाजिक रूप से बहिष्कृत समूहों पर आर्थिक सुधारों के प्रभाव पर विस्तार के लिए, एक दृष्टिकोण के रूप में, सीमाओं और संभावनाओं के बारे में हमारा मार्गदर्शन करेंगे। ये समूह पीढ़ियों से अनुसूचित जाति, आदिवासी, ग्रामीण दस्तकार, मुसलमान और बुनकरों आदि के रूप में निर्धारित और जाने जाते हैं।

टिप्पणियां

1. Amartya Sen, *Social Exclusion: Concept, Application and Scrutiny* (Asian Development Bank, Bangkok, 2000); Amartya Sen, *Identity and Violence* (New Delhi: Oxford University Press, 2006).
2. Gordon Childe, *What Happened in History?* (Harmondsworth, Middlesex: Pelican, 1952), 11.
3. Nayanjoti Lahari, 'D.D. Kosambi: The Historian as Writer', *Economic and Political Weekly*, 14 October 2009.
4. Hollis Martin, *The Philosophy of Social Science: An Introduction* (New Delhi: Cambridge University Press, 2000), 15.
5. Thomas Kuhn, *The Structure of Scientific Revolutions* (Chicago: Chicago University Press, 1972).
6. K.B. Krishna, *K.B. Krishna Selected Writings Vol. 1* (Guntur: Centre for Scientific Socialism, Nagarjuna University, 2006), 76–80.
7. Ibid.
8. Marx Karl, *Early Writings*, trans. and ed. T.B. Bottomore (New York: McGraw Hill, 1964).
9. *The Times of India and The Hindu*, New Delhi, 15–17 October 2010.
10. *Shrimad Bhagavad Gita* (Gorakhpur: Gitapress, 2006).
11. K.S. Chalam, Indiyalo Samajika Parinamama: Oka Pariseelana (Telugu) (Visakhapatnam: Kalingandhra Prachuranalu, 2000). लेखक ने एक संस्था के रूप में जाति की भौगोलिक स्थिति की व्याख्या की है जिसकी शुरुआत आर्यों ने पश्चिम भारत में एक प्रतिमान के रूप में की थी ताकि वे स्थानीय लोगों को अपने सामाजिक क्रम के ढांचे में अपना सकें। इसीलिए जहां आर्य फैले वहां जातियों की संख्या ज्यादा है, जबकि पूर्व और उत्तर-पूर्वी क्षेत्रों में कम। स्थानीय भारतीयों के रूप में दलितों को आर्य वर्ण की स्कीम से बाहर रखा गया। एक बार आर्यों ने जहां डेरा डाला, एक के बाद एक वह समूह जो उनकी व्यवस्था को मानता गया वो समाज की मुख्यधारा में आ गया और जिसने इसका विरोध किया उसे सबसे नीचे क्रम का मान लिया गया और वह अछूत बना रहा।

Copyright © 2017. SAGE Publications India Pvt, Ltd.. All rights reserved.

Chalam, K. S.. Arthik Sudhar Aur Samajik Apvarjan : Bhaarat Mein Upekshit Samuhon Par Udareekaran Ka Prabhav, SAGE Publications India Pvt, Ltd., 2017. ProQuest Ebook Central, http://ebookcentral.proquest.com/lib/inflibnet-ebooks/detail.acti
Created from inflibnet-ebooks on 2022-10-12 18:52:35.

12. Sen, *Identity and Violence*.
13. Ramakrishna K. Rao, *Magical Synthesis: Meditating on the Mandala of Indian Identity* (Delhi: Concept Paper, ICPR, 2007).
14. Planning Commission, *Towards Faster and More Inclusive Growth* (New Delhi: Government of India, November 2006 and December 2007).
15. K.S. Chalam, *Educational Policy for Human Resources Development* (Jaipur: Rawat Publications, 1999).

Copyright © 2017. SAGE Publications India Pvt, Ltd.. All rights reserved.

Chalam, K. S.. Arthik Sudhar Aur Samajik Apvarjan : Bhaarat Mein Upekshit Samuhon Par Udareekaran Ka Prabhav, SAGE Publications India Pvt, Ltd., 2017. ProQuest Ebook Central, http://ebookcentral.proquest.com/lib/inflibnet-ebooks/detail.actio
Created from inflibnet-ebooks on 2022-10-12 18:52:35.